संगीत में काव्य की अभिप्रेरणा

डॉ. दीपक त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर (संगीत विभाग)
साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद
ईमेलः deep.naadbramha333@gmail.com

11

सारांश

अनादिकाल से संघर्षरत मनुष्य नवीन शक्ति संचय के लिए विश्राम के क्षणों में ऐसे रंजक साधनों की अपेक्षा रखता था जिनके द्वारा वह तन्मय होकर स्वयं को भूलकर आनन्दित हो सके। मानव को आनन्द प्राप्ति के जितने साधनों का अविष्कार किया उन सभी में संगीत और काव्य कला सर्वश्रेष्ठ है। संगीत और काव्य का सम्बन्ध अविछिन्न है। संगीतज्ञ अपने मनोभावों को स्वर–लय के माध्यम से व्यक्त करता है आदि साहित्यकार अपने मनोभावों को स्वर–लय के माध्यम से व्यक्त करता है और साहित्यकार अपने मनोगत भावों तथा जीवन की अनुभूतियों को शब्दार्थ के माध्यम से। संगीत साहित्य के अर्थ को व्यक्त करने में सहायक है और साहित्य संगीत के रूप को व्यक्त करने में सहायक। दोनों कलाएं मानव जीवन की सुखानुभूति के लिए अपरिहार्य है। कहा भी गया है–''साहित्य संगीत कला विहीनः, साक्षात्पश्रशुः पुच्छविषाणहीनः।''

मुख्य शब्द

संगीत – काव्य।

प्रविधि(Methodology)– इस शोध आलेख में वर्णनात्मक शोध का प्रयोग किया गया। जिससे बंदिशों में पाये जाने वाले काव्यात्मक प्रभावों को आसानी से समझा जा सके।

उद्देश्य–इस शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य है कि किस प्रकार संगीत में काव्य की धारा को मिलाया गया है। प्रयास है कि संगीतार्थियो को इस पक्ष से भी अवलोकित कराया जा सके।

''संगीताचार्य विश्वंभरनाथ भट्ट के मतानुसार–''काव्य और संगीत परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। काव्य को शब्दों में संगीत और संगीत को स्वरों में काव्य कहा जा सकता है। यह ललित कलाओं का पारस्परिक आदान–प्रदान है। ''काव्य–मीमांसा'' के अष्टम अध्याय में काव्य–रचना के बारह स्रोतों में से प्रकीर्णक के अन्तर्गत संगीत भी काव्य–कला में सहायक एक महत्वपूर्ण स्रोत है। संगीत और काव्य इन दोनों का आधार नाद तत्व है। जो अनुपम अद्वितीय है। बृहद्देशी में लिखा है–

''नादरूपः स्मृतोब्रह्मा नादरूपो जनार्दनः।
नादरूपा पराशक्तिः नादरूपो महेश्वरः।।

विश्व के आनन्दमय तत्व अर्थात् नाद का साकार रूप संगीत व साहित्य है। पंज महाभूतों में से प्रथम और सबसे आकाश का गुण होने के कारण 'शब्द' सर्वत्र व्याप्त है। शब्द ही वाक् तत्व है और भारतीय विचारधारा में इसके दो रूप माने गए हैं–नादात्मिका वाक्, वर्णात्मिक वाक्। इन्हीं दोनों से क्रमशः संगीत और काव्य की उत्पत्ति होती है। इसलिए संगीत में स्वर और काव्य में पद की प्रधानता होती है।

भारतीय चिन्तकों ने काव्य और संगीत को परस्पर पूरक, सहोदरा और अन्योन्याश्रित माना है। प्रो0 विश्वनाथ प्रसाद के अनुसार–''संगीत अर्थबोध के लिए काव्य का सहारा लेता है और काव्य प्रभावबुद्धि के लिए संगीत का।'' डॉ0 रामानन्द तिवारी के शब्दों में–''संस्कृति और कला साम्य की भांति कलाओं के अन्तर्गत संगीत और काव्य में अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध का कारण शब्द के माध्यम की समानता है। इस समानता की दृष्टि से ये दोनों कलाएं सहोदरा है। सुमित्रा नन्द पंत जी ने कविता को प्राणों का संगीत माना है तथा काव्य और संगीत की मैत्री पर बल देते हुए लिखा है–

''भाव गीति की स्वर लय मैत्री–सी।
षड्ऋतुएं नित संगति में आती।।

पं0 ओंकारनाथ ठाकुर जी ने संगीत व काव्य के सम्बन्ध को अविभेद्य माना है। जिस प्रकार अकारादि व्यंजनों के साथ 'अ' आदि स्वर का सम्बन्ध, शरीर के साथ आत्मा का सम्बन्ध है उसी प्रकार काव्य और संगीत का सम्बन्ध है। ये माँ सरस्वती के दो स्तनों की भांति हैं, जिनका दुग्धपान कर कवि, कवि और संगीतकार संगीतकार बना है। डॉ0 शरतचन्द्र परांजपे का विचार है कि संगीत नाद प्रधान साहित्य है और साहित्य शब्द प्रधान संगीत है।''

काव्य और संगीत का सम्बन्ध शाश्वत है–आध्यात्मवाद की दृष्टि से भी और विकासवाद की दृष्टि से भी। उपनिषदों में कवि और गायक को एक ही अर्थ में लिया गया है। भारतीय परम्परानुसार नटराज शंकर स्वरों के आदिस्रोत हैं। डमरु के शब्दों से ही साहित्य के 'अक्षरों' और संगीत के 'स्वरों' की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार काव्य और संगीत का उन्मेष एक साथ हुआ। विकासवाद की दृष्टि से प्रायः सभी विधाओं, कलाओं, सिद्धान्तों, शास्त्रों आदि का विकास शनैः–शनैः हुआ है। प्रारम्भिक काल में किसी शब्दोच्चारण के लिए नाद या स्वर की एवं किसी स्वरोच्चारण के लिए शब्द की आवश्यकता पड़ी ही होगी। इसलिए हम कह सकते हैं कि स्वरविहिन शब्दोच्चारण और शब्दविहीन स्वरोच्चारण असम्भव है। इनका सम्बन्ध शाश्वत है। यही स्वर और शब्द विकसित होकर क्रमशः संगीतशास्त्र और साहित्य शास्त्र के रूप में प्रचलित हुए।

संगीत और काव्य दोनों का आधार ध्वनि अथवा शब्द है। यदि काव्य–पाठ एक ही ध्वनि में, एक–सी लय में किया जाए तो वह काव्य–पाठ हास्यस्पद हो जाएगा इसके विपरीत उन सार्थक शब्दों का विभिन्न स्वर–लय योजना के साथ प्रयोग किया जाए तो विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति सहजता से ही हो जाएगी। उदाहरणार्थ–''करो ना मोसे रार साँवरिया'' इस वाक्य में एक सम्बोधन, एक क्रिया और उसका निषेध है। गद्य में भी इसी बात को कहत सकते हैं। सामान्य रूप से कहने पर अर्थबोध तो होगा लेकिन भाव–बोध नहीं। उसके अर्थ में नवीनता, उत्कटता लाने में संगीत ही समर्थ है। मंगलदास अग्रवाल जी ने कहा है कि ''कवि की कल्पना और भावनाओं से उत्पन्न कविता जब स्वर और ताल में आबद्ध हो संगीत का स्वरूप प्राप्त कर लेती है तो उसका आनन्द द्विगुणित हो जाता है।'' काव्य की विशिष्टता उसके अन्तर में निहित स्वर है और स्वर का अलंकार शब्द है।

संगीत और काव्य दोनों ही लय पर आश्रित हैं। लय, शब्द के साथ संयुक्त होकर छन्द बन जाती है। छन्दों में आबद्ध काव्य ही संगीत की आधारभूमि है। अधिकांशतः काव्यसहित्य छन्दोबद्ध है। संगीतशास्त्र में भी छन्द का अटूट सम्बन्ध है। संगीत की लय, मात्रा और ताल का विधान छन्दों में सम्पूर्ण रूप से व्याप्त रहता है। संगीत के लय की गणना का आधार मात्रा है और मात्राओं द्वारा ही छन्द की गत का भी बोध होता है। यद्यपि मुक्त छन्द की कविताओं में छन्द के नियमों की शिथिलता होने पर भी उनमें एक प्रवाह, एकगति होती है और यह गति संगीत की लय ही होती है। क्षेमेन्द्र के कवि के लिए छन्द योजना को, रस और वर्णनीय विषय के अनुकूल रखना उचित ठहराया है–

काव्ये रसानुसारण वर्णनानुगुणेन च।
कुर्वीत सर्ववृत्तानां विनियोग विभागवित्।।

जैसे श्रृंगार या करुण रस में कोमल–कान्त पदावली तथा मालिनी जैसे–छन्द तथा वीर रस में कर्णकटु–वर्ण एवं शार्दूलविक्रीडित जैसे– छन्द अधिक उचित प्रतीत होते हैं।

काव्य और संगीत दोनों की आत्मा रस है। रस ही रंजन का कारण है। काव्य के अन्तर्गत नौ रसों का विधान है जो कि संगीत में केवल चार रसों (श्रृंगार, वीर, करुण और शान्त) में ही समाविष्ट कर लिया गया है। काव्य में शब्दावली के माध्यम से रस की उत्पत्ति की जाती है जिसे स्वरों की सहायता से चरमोत्कर्ष की दिशा में लाया जाता है। काव्य के पदों को स्वर बद्ध करने से पूर्व उससे उत्पन्न होने वाले रस पर विचार करना आवश्यक होता है। उसी प्रकार संगीत में गाए जाने वाले भिन्न–भिन्न रागों से विभिन्न प्रकार के उत्पन्न होने वाले रसों पर भी विचार करना आवश्यक है। जब राग से उत्पन्न होने वाले रस के अनुरूप गेय पद का प्रयोग होता है तो राग और अधिक रंजकता को प्राप्त कर लेता है। अतः रस–विशेष के लिए शब्दों का चयन काव्य–ज्ञान के बिना असम्भव है।

संगीत के मुख्य तीन अंग हैं– गायन, वादन और नृत्य। इसमें गायन कला प्रमुख मानी जाती है। गायन के लिए हमें गेय पदों की आवश्यकता पड़ती है। यही गेय–पद साहित्य हैं। जिस प्रकार संगीत, काव्य के लिए अपरिहार्य है, उसी प्रकार ''संगीत में भी आधार रूप में पद का प्रयोग ग्राह्य माना गया है।''

भरत मुनि ने कहा है–

गान्धर्व यन्मया प्रोक्तं स्वरतालपदात्मकम्।
पदं तस्य भवेद् वस्तु स्वरतालानुभावकम्।।

बिम्ब–विधान की दृष्टि से भी काव्य और संगीत में समानता है। जैसे–कवि अपनी रचनाओं द्वारा समाज के बिम्ब उपस्थित करता है वैसे ही संगीतकार भी राग निबद्ध बंदिशों द्वारा समाज की मनोवृत्ति आदि का बिम्ब प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार कल्पना मानसिक सृष्टि है। कल्पनातत्व के ही साहचर्य से काव्य और संगीत में नवीनता, विलक्षणता, सूक्ष्मता, चमत्कारिकता आदि का समावेश होता है। कवि और संगीतकार अपनी उत्कृष्ट कला–सृष्टि के लिए वर्ण विषय तथा रागादि के स्वरूप की कल्पना करता है। बुद्धितत्व भी दोनों कलाओं के विकास में सहयोगी है। यह तत्व काव्य में उचित शब्द तथा छन्दादि का प्रयोग करने का मार्ग प्रशस्त करता है और संगीत में काल–स्वरादि के उचित प्रयोग का बोध कराता है।

संगीत के आधार जहाँ नाद स्वर, ग्राम, सप्तक, मूर्च्छना, लय, ताल आदि संगीतिक तत्व होते हैं, वहीं काव्य के माध्यम भावादि, काव्य तत्व, भाषा, अलंकार, शब्द शक्ति, छन्द आदि होते हैं। संगीत में विशेष राग की अभिव्यक्ति, सप्तस्वर, श्रुति, मूर्च्छना, विशिष्ट स्वर (कोमल, तीव्र) तथा विशिष्ट आरोहावरोहण से होती है किन्तु काव्य में विशिष्ट भाव की अभिव्यक्ति, विशिष्ट अलंकार, शब्द शक्ति तथा विशिष्ट छन्दों के सामजन्य से होती है।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि संगीत के बिना काव्य प्रभावशाली तो रहता है किन्तु उसमें जन–मानस को आन्दोलित कर उत्साहित करने की पूर्ण शक्ति का अभाव रहता है। इसी प्रकार शब्दरहित स्वर संगीत कल्पना–लोक के स्वप्निल आनन्द की सृष्टि तो करता है, परन्तु उसमें हृदय के भावों को साकार करने, सर्वसाधारण के लिए सुलभ बनाने की न्यूनता परिलक्षित होती है। काव्य और संगीत का समन्वित और सन्तुलित रूप ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। इसीलिए गायक की अपेक्षा होती है एक सिद्ध कवीश्वर की जिसकी रचना का आश्रय लेकर वह अपने स्वरों का संकोच, विस्तार, आरोहण–अवरोण कर सके, अपनी गमक मीड़ और मुरकियों को प्रभावित प्रदान कर सके तथा अपने स्वाभाविक सरल संगीत को कुछ घनीभूत कर सके और कवि की अपेक्षा होती है एक ऐसे सफल गायक की, जो उसके एक–एक शब्द की आत्मा को झंकृत करके सहृदय–संवेद्य बना सके।''

पद्य और तबले की शायरी की तुलना

1.	भाषिक काव्य का कोई अर्थ होता है।	1.	तबले के रचना–काव्य का कोई भाषिक अर्थ नहीं होता है।
2.	काव्य में भावना महत्त्वपूर्ण होती है।	2.	मानवी भावना व्यक्त करना तबले के काव्य का हेतु नहीं है। किन्तु उचित नाद, ध्वनि, जोरदारपन, नजाकत, गति की विविधता आदि के माध्यम से तबला गीत की रसभाव–निर्मिति में सहायता पहुँचता है।
3.	भाषिक काव्य में शब्दचमत्कृति होती है और शब्दालंकारों का उपयोग प्रभावपूर्ण ढंग से किया जाता है।	3.	तबले में शब्दचमत्कृति महत्त्वपूर्ण अंग है। तबले के काव्य में प्रास, अनुप्रास, अन्त्यानुप्रास आदि शब्दालंकारों के साथ यति का सातत्य के साथ उपयोग होता है।
4.	काव्य में बौद्धिक शक्ति एवं कल्पना–शक्ति होती है।	4.	तबले में बौद्धिक शक्ति और कल्पना शक्ति विद्यमान होती है।
5.	काव्य के विचार लयबद्ध रचना के माध्यम से व्यक्त होते हैं।	5.	तबले की रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किया गया विचार की लयबद्धता के द्वारा व्यक्त होता है।

संगीतमय कविता और काव्यात्मक संगीत ही पूर्णरूपेण में कविता या संगीत कहे जाने के अधिकारी हैं। ''काव्य के अन्तःकरण में जब संगीत स्पंदन करने लगता है तब काव्य में सजीवता आ जाती है। संगीत एक अमूर्त कला है और भावपूर्ण शब्द–योजना इसे मूर्तता प्रदान कर अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं के साथ उसे साकार कर देती है। संगीतज्ञ साहित्य में और साहित्यकार संगीत में पारंगत हो, यह सम्भव नहीं है तथापि किसी एक के अध्ययन हेतु दूसरे के मर्मों को समझना तो आवश्यक है। संगीत और काव्य में यह पारस्परिक आदान–प्रदान अनिवार्य है। इसलिए ये दोनों ही ललित कलाएं एक–दूसरे के पूरक है। अतः जहाँ एक की प्रतिष्ठा होती है, वहाँ दूसरा स्वयं ही प्रतिष्ठित हो जाता है।

संदर्भ

1. चौधरी, डॉ0 सुभद्रा, भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान।
2. चौधरी, सुभद्रा, संगीत–संचयन, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, प्रथम संस्करण–1989
3. मुसलगाँवकर, विमला, संगीतोपयोगी संस्कृत (प्रथम भाग), मछोदरी, वाराणसी, अगस्त–1973।
4. कुमार, डॉ0 अरविन्द, भारतीय सांगीतिक जगत को तुलसीदास का योगदान, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2005
5. पाण्डेय, डॉ0 अर्चना, भारतीय संगीत और कवि घनानन्द, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2006।
6. वर्मा, डॉ0 सीमा, सृजनकला के रूप में संगीत की असाधारणता एवं विभिन्न विषयों के साथ अन्तःसम्बन्ध ''संगीत एक असाधारण सृजनकला'' 24–25 फरवरी 2006, राष्ट्रीय संगीत–संगोष्ठी।
7. मईणकर, पं0 सुधीर, तबला–वादन : कला एवं शास्त्र, अ0भा0 गांधर्व महाविद्यालय मण्डल, मिरज़ संस्करण–2000।